E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2020; 2(2): 8-10
Received: 05-01-2020
Accepted: 06-02-2020

नीतु कुमारी
शोध–छात्रा, विश्वविद्यालय हिन्दी–विभाग ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगाए, बिहार, भारत

Corresponding Author:
नीतु कुमारी
शोध–छात्रा, विश्वविद्यालय हिन्दी–विभाग ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगाए, बिहार, भारत

कीर्तिनारायण मिश्र की कविताएँ और तद्युगीन समाज

नीतु कुमारी

सारांश
कीर्तिनारायण मिश्र की कविता साठोत्तरी मोहभंग की मानसिकता और वास्तविक स्थिति की उपज है। इनकी कविताओं में परिवेश की जिस यथार्थता को अभिव्यक्ति मिली है वह वास्तविकता है, सत्य है। आम आदमी की छटपटाहट और अकुलाहट की गहरी समझ मिश्र जी को है जिसे उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। सामाजिक संवेदना के भयावह स्वरूप के प्रति उनका आक्रोश भी एक संवाद की स्थिति निर्मित करता है जो तद्युगीन सामाजिक परिवेश को उद्घाटित करता है।

भूमिका
कवि की पूरी प्रतिबद्धता सामाजिक यथार्थ से होती है। वे अपने प्रत्येक भाषा की प्रत्येक रचना में सामाजिक यथार्थ का ही अंकन करते हैं। कहा भी गया है कि 'साहित्य समाज का दर्पण' होता है। काव्य में समाज का चित्र अंकित होता है। जिस काव्य के रचना काल में समाज की जो स्थिति होती है, उसका प्रभाव उस रचना में प्रतिबिम्बित होता है। कविता में सामाजिक स्थिति का वर्णन करते हुए अनेक विद्वानों ने अपने–अपने मत प्रस्तुत किए हैं।
हिन्दी साहित्यकोश के अनुसार– यह उल्लेखनीय है कि तुलसी ने मानस में ''सुरसरि सम सबकर हित होई'' में साहित्य की सामाजिकता ही स्वीकृत की है। अतः साहित्य की विवेचना केवल अभिव्यंजना पक्ष, शब्दार्थ के सहभाव अथवा आभ्यन्तर रसपक्ष को लेकर नहीं की जा सकती, उसकी सामाजिक प्रेरणा और सामाजिक उपयोगिता पर भी विचार करना आवश्यक हो जाता है।(1)
डॉ. अमर कुमार सिंह के अनुसार– समाज–पद्धति कवि–चेतना को प्रभावित करती है। इसी रूप में समाज की स्वस्थ और विघटित मूल्य–स्थिति का प्रभाव कविता पर पड़ता है। कविता और समाज के सूक्ष्म सूत्रों की अन्तः प्रक्रिया के अध्ययन से यह पता चलता है कि समाज पर चना का जिस तरह प्रभाव पड़ता है, उसी प्रकार रचना पर समाज का। कविता में सामाजिक प्रभाव बराबर प्रतिफल होता है। कविता में समसामयिक सामाजिक स्थिति की प्रतिछाया होती है।(2)
डॉ. रघुवंश ने सामाजिकता पर विचार करते हुए लिखा है, ''आज का कवि केवल अभिव्यक्ति के सौंदर्य–मात्र को अपना लक्ष्य स्वीकार नहीं करता। वह अधिक गंभीर सामाजिक उत्तरदायित्व को मानकर चलता है।''(3)
डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है– ''सामाजिक परिवेश के प्रमुख अंग हैं– वर्ग व्यवस्था, सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ, धर्म–दर्शन, कला आदि। वर्ग–व्यवस्था व्यक्तियों के परस्पर सम्बन्धों के क्रमशः चय–संचय का नाम है। यह एक प्रकार से सामाजिक तंत्र का ताना–बाना है।(4)
इन विद्वानों की व्याख्या से स्पष्ट होता है कि किसी भी रचना–प्रक्रिया के मूल में सामाजिकता होती है। हरेक काल की कविता अपने समय के सामाजिकता से हमें अवगत कराती है। चाहे वो आदिकाल हो या भक्तिकाल हो या रीतिकाल हो, या फिर आधुनिक काल ही क्यों न हो हर काल की रचना हमें उस काल के सामाजिक स्वरूप का दर्शन कराती है। कवि की पूरी प्रतिबद्धता सामाजिक यथार्थ से है।
किसी भी साहित्यकार पर पड़ने वाले कुछ प्रभाव भी होते हैं, जिससे वह प्रेरणा पाता है और वह प्रेरणा कभी अनुकरण बनकर, कभी प्रभाव के रूप में, कभी आदर्श स्थापना के रूप उसके साहित्य में प्रकट होती है। साहित्य में प्रभाव पड़ने की दिशा नहीं होती, वह अपने निकट, सुदूर अतीत, दूसरी जातियों, भाषाओं, संस्कृति आदि के प्रभाव भी साहित्य में आते हैं।
कवि कीर्तिनारायण मिश्र की रचना–प्रक्रिया साठोत्तरी काव्य–धारा की उपज है। साठोत्तरी समाज में दो किस्म के लोग हैं, पहला वर्ग है जो प्राचीन आदर्श, मूल्यों और रूढ़ियों का समर्थक है, दूसरा वर्ग इन सब का सख्त विरोधी है और नये मूल्यों का पोषक है। 'कमलेश्वर' लिखते हैं– ''नयी पीढ़ी तथा पुरानी पीढ़ी के विभेदों के रूप में पुराने मूल्यों का विघटन और उसकी जगह नये मूल्यों के स्थापित होने की छटपटाहट जीवन के हर चौराहे पर दृष्टिगोचर हो रही थी।''(5)

स्वतंत्रता के बाद सन् साठ तक आते–आते लोगों में मोहभंग होने लगा। मोहभंग इसलिए कि लोगों ने स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद की जो कामना की थी, वो सब धरे के धरे रह गये। इससे लोगों में गहरी निराशा हुई। इस मोहभंग से युवा लेखकों को सबसे अधिक निराशा हुई, क्योंकि इन्हें विकृत्त सामाजिक व्यवस्था का परिणाम भुगतना पड़ा।

साठोत्तरी काव्य–धारा से अपनी लेखनी की शुरूआत करने वाले कवि कीर्तिनारायण मिश्र का हिन्दी कविता के विकास–प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण योगदान है। इनकी कविताएँ कई संवेदनाओं से जुड़ी हुई हैं, जो सम्पूर्ण मानव–जीवन को दर्शाती है। तत्कालीन जीवन से जुड़ी प्रत्येक स्थिति–परिस्थिति का यथार्थपूर्ण चित्रण इन्होंने अपनी कविताओं में सफलतापूर्वक किया है। उस समय के मोहभंग की स्थिति को दर्शाते हुए कवि अपनी हिन्दी कविता 'अकेला मैं' में कहते हैं–

खुद को जीने की असह्य यंत्रणा में
कराहता हुआ मैं
स्वप्नजीवी विश्वासों की क्षयोन्मुख काया के प्रति
सदय हो उठा हूँ
सहानुभूति उभर आयी है
बौनी आशा के सहारे लड़खड़ाते ठूंठ जीवन के प्रति
पीव की नदी में लथपथ विकलांग देवता को चाहिए
लुंज आत्मा की वैशाखी[6]

मिश्र जी की कविताओं में विद्रोह एवं संघर्ष वैयक्तिक स्तर पर अभिव्यक्ति पाता है वह प्रतीकों के माध्यम से अपनी बात को छिपाने के पक्ष में नहीं है। उनकी कविताओं में कथ्य या संवेदना के विकास का पथ दृष्टिगोर होता है। समाज में व्याप्त सामंतवादी व्यवस्था से कवि आहत है। तत्कालिन परिस्थिति को दर्शाते हुए कवि कहता है–

उसी सपनीली आँखें/तराशे हुए शब्द
मर्मस्पर्शी स्पर्श/जादुई संकेत
भटकाएँगे तुम्हें/न जाने कहाँ–कहाँ
पीछा नहीं छोड़ेंगे जाओगे जहाँ
और तुम हारकर/उनसे ही पूछोगे आगे का रास्ता
किनका कभी/इससे था वास्ता[7]

सातवें दशक की कविताओं के मूल में सामाजिक अन्याय, शोषण, अत्याचार, भ्रष्टाचार, अव्यवस्था और असमानता के विरूद्ध गहरे संघर्ष की भावना व्यक्त हुई है। इस पर प्रकाश डालते हुए 'गणपतिचन्द्र गुप्त' जी कहते हैं–

''सातवें दशक की हिन्दी कविता के क्षेत्र में जहाँ एक ओर विदेशी प्रभाव से निषेध–मूलक आन्दोलन पनप रहे थे, वहीं दूसरी ओर अनेक ऐसे आंदोलन भी उभर रहे थे, जिन्हें संघर्षमूलक कहा जा सकता है, ये आन्दोलन अकविता या निषेधमूलक कविता की भाँति घोर वैयक्तिक, अतियथार्थवाद, भोगवाद पर आधारित नहीं थे, अपितु इसके मूल में व्यापक सामाजिक चेतना कार्य कर रही थी, इसीलिए ये समाज से दूर भागने या उसकी प्रतिकूल स्थितियों से पलायन करने के अपेक्षा उनमें प्रवृत्त होकर संघर्ष करना अधिक उचित समझते थे।[8]

मिश्र जी की दो काव्य–संग्रह 'अकेला मैं एवं शिखर पर साँझ' इस दशक में आयी है, कविताओं पर इस दशक का पूर्ण प्रभाव लक्षित होता है, परन्तु आगे के काव्य संग्रहों पर भी इसका प्रभाव देखा जा सकता है। ये वो समय था, जब युवा पीढ़ी के नए नजरिए और नई नैतिकता के कारण द्वन्द्व की स्थिति पैदा हो गई थी।

भ्रष्ट राजनीति, वैज्ञानिक चिन्तन, औद्योगीकरण, पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव, उपलब्धि, तर्क–वितर्क, परिवेश, सजगता, शहरीकरण, महँगाई, आदि से मोहभंग के कारण प्राचीन मूल्य विवादास्पद हो गए थे। कवि के शब्दों में–

''सरकारी उत्साहवश मैंने
जनजीवन को/खुशहाल और लहलहाते देखा
अन्यथा मुझे स्पष्ट दिख रही थी
देश के ललाट की दारिद्रय–रेखा
सूद और आसान किस्तों पर प्राप्त विश्वास
बेचवाते रहे वंशधरों की लाश''[9]

अपने कवि जीवन की विवशता को दर्शाते हुए इसी कविता में वो आये लिखते हैं–

''अस्तित्व भक्षी व्यवस्था
और तुम्हारे कारण हुई अवस्था ने
समझौतावादी बना दिया
जीवन के सुख–दुःख के गायक को
शब्दों का व्यापारी बना दिया।[10]

सामाजिक परिस्थिति को कवि ने अनुभूति के स्तर पर भोगा है। उनकी रचना–शक्ति का रहस्य भी इसी तथ्य में छिपा है कि जो कुछ इन्होंने भोगा है, उसे ही रचा है। इसी कारण इनकी कविताओं में व्याप्त कुंठा जो परिस्थिति जन्य है, वही सामाजिक भी है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के परिणाम स्वरूप हमारी मान्यताओं का अधिकांश तथ्य झूठा सिद्ध होने लगा। चाहे वह सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक या आर्थिक स्तर पर ही क्यूँ न हो, जिसका एक मुख्य वजह नयी जीवन–व्यवस्था का अनुभव भी था। हमारे जिस भारतीय समाज में संयुक्त–परिवार एक मर्यादा के साथ बंधा था, वहीं अब सीमित या एकल परिवार की स्थापना होने लगी, जिसमें पति–पत्नी और बच्चे आने लगे अधिक हो तो माता–पिता भी रह लेते थे, जिनके हालात भी कुछ ठीक नहीं थे। एक वृद्ध पिता की स्थिति को दर्शाते हुए कवि कीर्तिनारायण मिश्र जी अपने काव्य–संग्रह 'विराट वट–वृक्ष के प्रतिवाद में' नामक काव्य–संग्रह की कविता 'बेचारा पिता' शीर्षक वो लिखते हैं–

''बेटे को फिर बड़े प्यार से/एक दिन बुलाया
और बताया कि हालात कुछ ऐसे हो गये हैं
कि जाता नहीं रहा
उसने चुपचाप सब सुना
और उठते हुए/मौसम के बदलने तक
बुढ़ापे पर काबू रखने को कहा
मैं बेचारा पिता
तब से मौसम की मार झेल रहा हूँ
अपने पितृत्व की समाधि पर
परमपिता को/हेर रहा हूँ।''[11]

आज का सामाजिक जीवन अनास्था, टूटन और अविश्वास के विषाक्त वातावरण में घुट रहा है। मात्र तीन पंक्ति की एक कविता 'समर्पण' में कवि लिखते हैं–

''सड़ी जिन्दगी
गन्धाता विश्वास
संक्रान्ति के देवता को समर्पित संत्रास''[12]

समाज में आज सर्वत्र हाहाकार असंतोष ओर क्लेस व्याप्त है। अधिकांश लोग दुःखी एवं संकटमय जीवन जीने को बाध्य हैं। मिश्रजी ने देश की सामाजिक परिस्थिति का अत्यंत यथार्थ वर्णन किया है, जिस भारत देश में अन्न एवं वस्त्रों का भण्डार था, जो स्वर्ण–शावक के नाम से विश्व विख्यात था, वही समाज आज अन्न–वस्त्र के बिना तरप रहा है। न्याय, धर्म, ईष्ट–आराधना, भजन–पूजन सभी व्यर्थ हो रहे हैं। आज मनुष्य अपने मूल्यों को भूल कर अन्न की खोज में भटक रहा है। इतना ही नहीं वर्तमान यांत्रिक युग में मनुष्य के पास इतना अवकाश और सुविधा नहीं है कि वह रीति–रिवाज, संस्कार और परम्पराओं का पालन कर सके। पारिवारिक विघटन में वैमनस्य की वृद्धि हुई और स्नेह संबंध कमजोर होते चले गये। इस परिस्थिति का मुख्य कारण शहरीकरण एवं जनसंख्या–वृद्धि था, जिसके कारण संयुक्त परिवार की व्यवस्था दूटने लगी। कवि के शब्दों में–

हल्की–सी सिहरन पर
कई–कई बार बल खानेवाली रहनियों को
क्या हो गया?
मंजरियों के गुंच्छों से नन्हें–नन्हें टिकोले
झड़ने लगे क्यों एकबारगी?
पूरे परिवेश पर छा कैसे गई ऐसी बेचारगी।(12)

जहाँ कई कारणों से संयुक्त–परिवार की व्यवस्था टूटने लगी, वहीं सीमित परिवार में आपसी व्यस्तता के कारण तनाव आ गया। सीमित रहने के कारण जीवन में तनाव बढ़ता गया, जिसके कारण अक्सर दुर्घटनाएँ भी होती हैं। जिसका प्रभाव सामाजिक वातावरण पर पड़ता है।

इस तरह परिस्थितिजन वातावरण से उपजा बाहरी द्वन्द्व कवि कीर्तिनारायण मिश्र के भीतर तक पहुँच गया है। जहाँ बाहर और भीतर का अंधेरा घना है। इनका मानसिक द्वन्द्व एवं आंतरिक संघर्ष कविता के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। कवि का द्वन्द्व सामाजिक परिस्थितियों को दर्शाने में पूरी तरह सक्षम है। कवि जो देखता है और महसूस करता है, उसे ही सच्चाई के साथ अभिव्यक्त करता है जो उसके द्वन्द्व के कारण ही संभव होता है और कवि का यह द्वन्द्व ही सामाजिक चेतना को दर्शाते हुए उसके परिवेश से पूर्णरूपेण गहनता से अवगत कराता है। इन सामाजिक परिस्थितियों को कवि केवल दर्शाता ही नहीं वरन, इनसे मुक्त वह संघर्ष एवं विद्रोह पर भी बल देता है जो कवि के मानवीय पक्ष को उभारता है। परिवेश के खोखलेपन, सामाजिक जीवन में निरंतर आ रही गिरावट, नैतिकहीनता आदि कवि मन को व्यथित करती है। अपनी इस व्यथा के कारण कवि उस रास्ते पर चलने से भी इन्कार करता है जो मानवता के खिलफ हो–

मुझे ही नहीं हो स्वीकार
उस पथ पर चनला
जिस पर चिन्हित हो असंख्य पैर
जो हो गया हो क्षत–विक्षत पदाघात से
जहाँ दौर रहा हो काल–अश्व
और खड़ा हो सवार।(13)

मिश्रजी की कविताओं में सामाजिक यथार्थ और सामाजिक वातावरण का हरेक चित्र सफलतापूर्वक अभिव्यक्त होता है।

निष्कर्षत

कीर्तिनारायण मिश्र जी कविता आजादी के बाद होश संभालने वाले की मानसिकता और संवेदनशीलता को उभारती है। कवि अपने चारो ओर की भयावहता, दहशत को महसूस कर अपनी कविताओं के माध्यम से उसे व्यक्त करता है। व्यवस्था के प्रति उनकी सोच असंतोष एवं अनास्था का है। आज के विकट और जटिल जीवन को जी रहे व्यक्ति का आक्रोश मिश्र जी की कविताओं में सार्थकता के साथ व्यक्त हुआ है।

संदर्भ–सूची

1. डॉ. अमर कुमार सिंह, ''नयी कविता की रचना–प्रक्रिया'', पृ. – 39
2. वही, पृ.– 38
3. डॉ. कृष्ण सिंह, ''अज्ञेय : काव्य रचना का वैशिष्टय'', पृ.– 64
4. डॉ. नगेन्द्र, ''साहित्य और समाज शास्त्र'', पृ.– 8
5. डॉ. अनिल कुमार राय, ''समकालीन कविता के तेवर'', पृ.– 212
6. कीर्तिनारायण मिश्र, ''शिखर पर साँझ'', पृ.– 10
7. कीर्तिनारायण मिश्र, ''जेठ की तप्त शिला'', पृ.– 50
8. कीर्तिनारायण मिश्र, ''विराट् वट वृक्ष के प्रतिवाद में'', पृ.– 33
9. वही, पृ.– 34
10. वही, पृ.– 52
11. कीर्तिनारायण मिश्र, ''शिखर पर साँझ'', पृ.– 9
12. कीर्तिनारायण मिश्र, ''विराट् वट वृक्ष के प्रतिवाद में'', पृ.– 27
13. कीर्तिनारायण मिश्र, ''जेठ की तप्त शिला'', पृ.– 9